IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 2, February 2026
Impact Factor: 8.2

# समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से भारतीय शिक्षा व्यवस्था में जातिगत असमानताओं का विश्लेषण

**विश्राम मीना**[1] and डॉ. **नेहा यादव**[2]

[1]शोधार्थी, शिक्षा शास्त्र - विभाग

[2]सह - प्राध्यापक, शिक्षा शास्त्र - विभाग

सनराइज़ विश्वविद्यालय अलवर, राजस्थान

**सारांश**

भारतीय समाज में जाति व्यवस्था एक ऐतिहासिक सामाजिक संरचना रही है, जिसने शिक्षा के अवसरों, संसाधनों और उपलब्धियों को गहराई से प्रभावित किया है। शिक्षा, जो सामाजिक परिवर्तन और समानता का प्रमुख साधन मानी जाती है, भारतीय संदर्भ में लंबे समय तक जातिगत विभाजन से प्रभावित रही है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य भारतीय शिक्षा व्यवस्था में जातिगत असमानताओं का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना है। इसमें जाति और शिक्षा के अंतर्संबंध, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, वर्तमान चुनौतियाँ तथा सरकारी नीतियों की भूमिका का विवेचन किया गया है।

**मुख्य संकेतक:** - जाति, शिक्षा, असमानता, समाजशास्त्र, सामाजिक न्याय।

## परिचय

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में समान अवसरों की अवधारणा संविधान द्वारा सुनिश्चित की गई है, लेकिन व्यवहारिक स्तर पर जातिगत असमानताएँ अभी भी विद्यामान हैं। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, और अन्य पिछड़ा वर्ग के विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्ति में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। समाजशास्त्री पियरे बोर्दियो के सांस्कृतिक बंधक सिद्धांत के अनुसार सामाजिक पृष्ठभूमि शिक्षा में उपलब्धियों को प्रभावित करती है (बौर्डियू, 1986)। भारत में जाति इसी सामाजिक पृष्ठभूमि का एक महत्वपूर्ण निर्धारक है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 2, February 2026 Impact Factor: 8.2

## जाति और शिक्षा: ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

प्राचीन भारत में शिक्षा मुख्यतः उच्च जातियों तक सीमित थी। शूद्रों और तथाकथित अस्पृश्यों को शिक्षा से वंचित रखा गया। औपनिवेशिक काल में आधुनिक शिक्षा के आगमन से कुछ परिवर्तन हुए, लेकिन सामाजिक पूर्वाग्रह बने रहे (देसाई, 1974)। स्वतंत्रता के बाद संविधान के अनुच्छेद 15(4), 17 और 46 के माध्यम से पिछड़े वर्गों की शिक्षा विकास हेतु विशेष प्रावधान किए गए। इसके बावजूद जातिगत भेदभाव का प्रभाव समाप्त नहीं हुआ।

भारतीय समाज में जाति और शिक्षा का संबंध अत्यंत गहरा, जटिल और ऐतिहासिक रूप से निर्मित रहा है, जिसने सदियों से सामाजिक संरचना, अवसरों की उपलब्धता तथा ज्ञान के वितरण को प्रभावित किया है। प्राचीन भारत में शिक्षा का स्वरूप मुख्यतः वैदिक और गुरुकुल प्रणाली पर आधारित था, जहाँ शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार मुख्यतः उच्च वर्णों विशेषकर ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तक सीमित था, जबकि शूद्रों तथा तथाकथित अस्पृश्य माने जाने वाले समुदायों को ज्ञानार्जन से वंचित रखा गया।

मनुस्मृति जैसी धर्मशास्त्रीय व्यवस्थाओं ने इस विभाजन को वैधता प्रदान की, जिसके अनुसार शूद्रों द्वारा वेदश्रवण तक को अपराध माना गया; इस प्रकार शिक्षा केवल ज्ञान का माध्यम न होकर सामाजिक प्रभुत्व और सत्ता संरक्षण का साधन बन गई। जातिगत आधार पर यह शैक्षिक बहिष्करण केवल औपचारिक शिक्षा तक सीमित नहीं था, बल्कि इससे सामाजिक गतिशीलता, आर्थिक उन्नति और सांस्कृतिक सहभागिता के अवसर भी नियंत्रित होते थे। मध्यकालीन भारत में भी स्थिति में बहुत बड़ा परिवर्तन नहीं आया; यद्यपि मुस्लिम शासन के दौरान मदरसा और मकतब जैसी संस्थाएँ विकसित हुईं, परंतु व्यापक सामाजिक स्तर पर जातिगत विभाजन कायम रहा और निम्न जातियों की शिक्षा तक पहुँच सीमित ही रही।

भक्ति आंदोलन ने अवश्य जाति-आधारित ऊँच-नीच को चुनौती दी; कबीर, रैदास और गुरु नानक जैसे संतों ने ज्ञान को सार्वभौमिक अधिकार माना, परंतु इन वैचारिक परिवर्तनों का संस्थागत शिक्षा व्यवस्था पर सीमित प्रभाव पड़ा। औपनिवेशिक काल भारतीय शिक्षा इतिहास में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ, जब ब्रिटिश शासन ने आधुनिक पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली की शुरुआत की। 1835 के मैकॉले के शिक्षा मिनट तथा 1854 के वुड्स डिस्पैच ने आधुनिक विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया, किंतु इन संस्थानों तक पहुँच भी प्रारंभ में उच्च जातियों और अभिजात वर्ग तक ही केंद्रित रही, क्योंकि आर्थिक संसाधनों, सामाजिक प्रतिष्ठा और भाषाई पूँजी पर उनका वर्चस्व था।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 2, February 2026 Impact Factor: 8.2

निम्न जातियों और दलित समुदायों की शिक्षा के प्रश्न को पहली बार गंभीरता से सामाजिक सुधारकों ने उठाया। ज्योतिराव फुले और सावित्रीबाई फुले ने पुणे में दलितों और बालिकाओं के लिए विद्यालय स्थापित कर शिक्षा के लोकतंत्रीकरण की दिशा में ऐतिहासिक पहल की; सावित्रीबाई फुले को भारत की प्रथम महिला शिक्षिका माना जाता है, जिन्होंने जाति और लिंग दोनों प्रकार के भेदभाव को चुनौती दी। इसी प्रकार डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर ने शिक्षा को सामाजिक मुक्ति का सबसे प्रभावी साधन बताते हुए "शिक्षित बनो, संगठित हो, संघर्ष करो" का आह्वान किया; उनका मानना था कि शिक्षा ही वह माध्यम है जिससे दलित समुदाय आत्मसम्मान, अधिकार चेतना और सामाजिक न्याय प्राप्त कर सकता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय संविधान ने शिक्षा और समानता के क्षेत्र में ऐतिहासिक परिवर्तन की नींव रखी। संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 17 और 46 ने समानता, भेदभाव निषेध, अस्पृश्यता उन्मूलन तथा अनुसूचित जातियों और जनजातियों के शैक्षिक हितों की विशेष सुरक्षा का प्रावधान किया। राज्य ने आरक्षण नीति, छात्रवृत्तियाँ, निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें, छात्रावास योजनाएँ तथा मध्याह्न भोजन जैसी योजनाओं के माध्यम से ऐतिहासिक रूप से वंचित समुदायों को शिक्षा से जोड़ने का प्रयास किया। कोठारी आयोग (1964–66) ने शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का साधन मानते हुए समान अवसर की अवधारणा को बल दिया। इसके बावजूद सामाजिक यथार्थ यह दर्शाता है कि जातिगत असमानताएँ आज भी शिक्षा व्यवस्था में विद्यमान हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक स्थानों पर दलित विद्यार्थियों के साथ भेदभाव, विद्यालयों में अलग बैठाना, शिक्षकों की पूर्वाग्रहपूर्ण मानसिकता, तथा सामाजिक अपमान जैसी समस्याएँ देखी जाती हैं। उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रवेश बढ़ने के बावजूद प्रतिनिधित्व, निरंतरता और सफलता दर में जातिगत अंतर स्पष्ट है। प्रतिष्ठित संस्थानों जैसे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान और केंद्रीय विश्वविद्यालयों में दलित और आदिवासी विद्यार्थियों को अक्सर सामाजिक अलगाव, मानसिक उत्पीड़न और संस्थागत भेदभाव का सामना करना पड़ता है। डिजिटल युग में भी जाति आधारित शैक्षिक विषमता नए रूपों में सामने आई है; ऑनलाइन शिक्षा के प्रसार के बावजूद तकनीकी संसाधनों, इंटरनेट उपलब्धता और पारिवारिक शैक्षिक वातावरण की असमानता निम्न जातियों के विद्यार्थियों को पीछे धकेलती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 समावेशी शिक्षा पर बल देती है, परंतु इसके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए सामाजिक चेतना, संवेदनशील प्रशासन और संस्थागत उत्तरदायित्व आवश्यक हैं। समकालीन भारत में जाति और शिक्षा का संबंध केवल ऐतिहासिक अध्ययन का विषय नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, लोकतंत्र और मानवाधिकार के विमर्श का केंद्रीय प्रश्न है। इतिहास यह स्पष्ट करता है कि शिक्षा का क्षेत्र लंबे समय तक सामाजिक वर्चस्व का

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 2, February 2026 Impact Factor: 8.2

उपकरण रहा, किंतु वही शिक्षा आज प्रतिरोध, समानता और परिवर्तन का माध्यम भी बन रही है। अतः जाति और शिक्षा के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को समझना इसलिए आवश्यक है ताकि वर्तमान नीतियों और प्रयासों को अधिक न्यायपूर्ण, समावेशी और प्रभावी बनाया जा सके।

## समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण वह वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक पद्धति है जिसके माध्यम से समाज, उसकी संरचना, संस्थाएँ, संबंध, प्रक्रियाएँ तथा मानव व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। यह दृष्टिकोण यह समझने का प्रयास करता है कि व्यक्ति केवल एक स्वतंत्र इकाई नहीं है, बल्कि वह समाज के विविध तत्त्वों जैसे परिवार, धर्म, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, राजनीति, संस्कृति और परंपराओं से गहराई से प्रभावित होता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण का मूल उद्देश्य यह जानना है कि सामाजिक संरचनाएँ किस प्रकार व्यक्तियों के विचारों, व्यवहारों और अवसरों को आकार देती हैं। समाज में व्याप्त असमानताएँ, जैसे जाति, वर्ग, लिंग, धर्म, क्षेत्रीयता आदि, इस दृष्टिकोण के अध्ययन के प्रमुख विषय हैं। उदाहरणतः किसी व्यक्ति की शिक्षा, रोजगार, सामाजिक प्रतिष्ठा अथवा जीवन स्तर केवल उसकी व्यक्तिगत योग्यता पर निर्भर नहीं करते, बल्कि उसके सामाजिक परिवेश और संसाधनों की उपलब्धता पर भी आधारित होते हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण सामाजिक संबंधों के जाल को समझने में सहायता करता है, जहाँ व्यक्ति और समाज एक-दूसरे को निरंतर प्रभावित करते हैं। इस दृष्टिकोण के अंतर्गत प्रमुख समाजशास्त्रियों कार्ल मार्क्स, एमिल दुर्खीम, मैक्स वेबर, हर्बर्ट स्पेंसर आदि ने समाज को अलग-अलग कोणों से समझाया है। कार्ल मार्क्स ने वर्ग संघर्ष को सामाजिक परिवर्तन का आधार माना, जबकि दुर्खीम ने सामाजिक एकता और सामूहिक चेतना पर बल दिया।

मैक्स वेबर ने सामाजिक क्रिया तथा व्यक्तियों के अर्थ-निर्माण को महत्वपूर्ण बताया। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण यह भी स्पष्ट करता है कि सामाजिक संस्थाएँ समाज में व्यवस्था बनाए रखने के साथ-साथ कभी-कभी असमानताओं को स्थायी भी बना देती हैं। उदाहरण के लिए शिक्षा संस्था ज्ञान प्रदान करने का माध्यम है, परंतु यदि सभी वर्गों को समान अवसर न मिले तो यही संस्था असमानता को बढ़ा सकती है। इसी प्रकार परिवार सामाजिककरण का प्रथम केंद्र है, जहाँ व्यक्ति भाषा, मूल्य, मानदंड और आचरण सीखता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण हमें यह समझने में सक्षम बनाता है कि सामाजिक समस्याएँ जैसे बेरोज़गारी, गरीबी, अपराध, लैंगिक भेदभाव, बाल श्रम, अशिक्षा केवल व्यक्तिगत विफलताएँ नहीं हैं, बल्कि उनके पीछे व्यापक सामाजिक कारण कार्यरत होते हैं।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 2, February 2026 Impact Factor: 8.2

यह दृष्टिकोण सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं का भी अध्ययन करता है, जैसे नगरीकरण, औद्योगीकरण, वैश्वीकरण, आधुनिकीकरण और तकनीकी विकास, जो समाज की संरचना और मान्यताओं को निरंतर बदलते रहते हैं। वर्तमान युग में डिजिटल क्रांति ने सामाजिक संबंधों, संचार पद्धतियों और जीवनशैली को गहराई से प्रभावित किया है, जिसका विश्लेषण भी समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से किया जाता है। यह दृष्टिकोण समाज में समानता, न्याय और समावेशन की आवश्यकता को रेखांकित करता है तथा नीति-निर्माण, शिक्षा सुधार, महिला सशक्तिकरण, सामाजिक न्याय और मानवाधिकार जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण व्यक्ति को अपने निजी अनुभवों को व्यापक सामाजिक संदर्भ में देखने की क्षमता प्रदान करता है, जिससे वह यह समझ पाता है कि उसकी समस्याएँ केवल उसकी व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक सामाजिक संरचनाओं से जुड़ी हो सकती हैं। इस प्रकार समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण समाज को समझने, उसकी जटिलताओं का विश्लेषण करने और सामाजिक परिवर्तन की दिशा निर्धारित करने का एक सशक्त माध्यम है।

**संरचनात्मक क्रियात्मकतावाद**

दुर्खीम के अनुसार शिक्षा सामाजिक एकता का माध्यम है, बावजूद भारत में जातिगत असमानता शिक्षा को विभाजनकारी बना देती है (दुर्खीम, 2012)।

संरचनात्मक क्रियात्मकतावाद समाजशास्त्र का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत है, जो समाज को एक सुव्यवस्थित, संगठित तथा परस्पर संबंधित तंत्र के रूप में देखता है, जिसमें प्रत्येक संस्था, मूल्य, परंपरा और सामाजिक संरचना का एक निश्चित कार्य होता है, और ये सभी मिलकर समाज की स्थिरता, संतुलन तथा निरंतरता बनाए रखते हैं; इस दृष्टिकोण के अनुसार समाज अनेक भागों जैसे परिवार, शिक्षा, धर्म, अर्थव्यवस्था, राजनीति और विधि से मिलकर बना है, और प्रत्येक भाग एक जीवित शरीर के अंगों की भाँति कार्य करता है, जहाँ प्रत्येक अंग की अपनी भूमिका होती है,

परंतु उसका अस्तित्व सम्पूर्ण शरीर की कार्यप्रणाली से जुड़ा रहता है; संरचनात्मक क्रियात्मकतावाद का विकास मुख्यतः ऑगस्त कॉम्ट, हर्बर्ट स्पेंसर, एमिल दुर्खीम, टैल्कॉट पार्सन्स तथा रॉबर्ट के. मर्टन जैसे समाजशास्त्रियों के योगदान से हुआ, जिनमें दुर्खीम ने समाज को नैतिक व्यवस्था मानते हुए यह प्रतिपादित किया कि सामाजिक तथ्य व्यक्ति से ऊपर होते हैं और वे सामाजिक एकता बनाए रखने में सहायक होते हैं, जबकि पार्सन्स ने समाज को एक ऐसी प्रणाली माना जो चार प्रमुख आवश्यकताओं अनुकूलन, लक्ष्य प्राप्ति,

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 2, February 2026 Impact Factor: 8.2

एकीकरण और प्रतिरूप संरक्षण के माध्यम से कार्य करती है; इस सिद्धांत के अनुसार परिवार संस्था समाज में समाजीकरण, भावनात्मक सुरक्षा और सांस्कृतिक हस्तांतरण का कार्य करती है, शिक्षा संस्था ज्ञान, कौशल और सामाजिक मूल्यों का प्रसार करती है, धर्म नैतिक अनुशासन और सामूहिक चेतना को सुदृढ़ करता है, राजनीति व्यवस्था और नियंत्रण स्थापित करती है तथा अर्थव्यवस्था संसाधनों के उत्पादन और वितरण को नियंत्रित करती है;

इस प्रकार समाज का प्रत्येक अंग सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में एक विशिष्ट योगदान देता है; रॉबर्ट मर्टन ने इस सिद्धांत को और अधिक व्यावहारिक रूप देते हुए प्रकट प्रकार्य और अप्रकट प्रकार्य की अवधारणाएँ प्रस्तुत कीं, जिनके अनुसार किसी संस्था के कुछ कार्य स्पष्ट और प्रत्यक्ष होते हैं, जबकि कुछ अप्रत्यक्ष और अनपेक्षित होते हैं, जैसे विद्यालय का प्रकट कार्य शिक्षा देना है, परंतु अप्रकट कार्य सामाजिक अनुशासन, प्रतिस्पर्धा और सामाजिक नेटवर्क निर्माण भी है; संरचनात्मक क्रियात्मकतावाद सामाजिक परिवर्तन को भी स्वीकार करता है, परंतु वह इसे धीमी, क्रमिक और संतुलित प्रक्रिया मानता है, क्योंकि तीव्र परिवर्तन सामाजिक असंतुलन उत्पन्न कर सकते हैं; यह सिद्धांत विशेष रूप से सामाजिक स्थिरता, एकता और सहमति को महत्त्व देता है तथा मानता है कि समाज के सदस्य साझा मूल्यों और मानदंडों के आधार पर एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं; उदाहरणतः यदि शिक्षा प्रणाली प्रभावी रूप से कार्य नहीं करती, तो बेरोजगारी, अपराध और सामाजिक असमानता जैसी समस्याएँ बढ़ सकती हैं, जिससे समूची सामाजिक संरचना प्रभावित होती है;

इसी प्रकार यदि परिवार संस्था कमजोर पड़ती है, तो समाजीकरण की प्रक्रिया बाधित होती है और सामाजिक नियंत्रण कमज़ोर हो सकता है; संरचनात्मक क्रियात्मकतावाद की प्रमुख विशेषता यह है कि यह समाज को संघर्ष की अपेक्षा सहयोग और समन्वय की दृष्टि से देखता है, परंतु इसी कारण इसकी आलोचना भी की गई है, क्योंकि यह सामाजिक संघर्ष, वर्गीय असमानता, शक्ति संबंधों और परिवर्तनकारी आंदोलनों की उपेक्षा करता है; मार्क्सवादी और संघर्षवादी विचारकों का मत है कि यह सिद्धांत यथास्थिति को उचित ठहराता है और सामाजिक विषमताओं को चुनौती नहीं देता; नारीवादी विचारकों ने भी इसकी आलोचना करते हुए कहा कि यह पितृसत्तात्मक संरचनाओं को सामान्य और आवश्यक मान लेता है; इसके अतिरिक्त यह सिद्धांत कभी-कभी यह मान लेता है कि समाज की हर संस्था उपयोगी है,

जबकि वास्तव में कुछ संस्थाएँ दमनकारी भी हो सकती हैं; फिर भी, समाज की संरचना, संस्थाओं की भूमिका और सामाजिक संतुलन को समझने में यह सिद्धांत अत्यंत प्रभावशाली रहा है; आधुनिक समाजशास्त्र में

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 2, February 2026 Impact Factor: 8.2

शिक्षा, परिवार, प्रशासन, ग्रामीण समाज, शहरीकरण और संगठनात्मक अध्ययन में इसका व्यापक उपयोग किया जाता है; भारतीय समाज के संदर्भ में भी यह सिद्धांत उपयोगी है, क्योंकि यहाँ परिवार, जाति, पंचायत, धर्म और शिक्षा जैसी संस्थाएँ सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं; उदाहरण के लिए भारतीय संयुक्त परिवार केवल आर्थिक इकाई नहीं, बल्कि सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण, सामाजिक सुरक्षा और उत्तरदायित्व वितरण का माध्यम भी है; इसी प्रकार जाति व्यवस्था, यद्यपि आज आलोचना का विषय है, ऐतिहासिक रूप से श्रम विभाजन और सामाजिक संगठन के रूप में देखी गई;

संरचनात्मक क्रियात्मकतावाद समाज को एक समन्वित प्रणाली के रूप में समझने का ऐसा दृष्टिकोण है, जो यह स्पष्ट करता है कि सामाजिक संस्थाएँ केवल अस्तित्व में नहीं रहतीं, बल्कि वे समाज की स्थिरता और निरंतरता बनाए रखने के लिए विशिष्ट कार्य करती हैं, और यद्यपि इसकी सीमाएँ हैं, फिर भी सामाजिक संरचना की गहन व्याख्या में इसका योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

### संघर्ष सिद्धांत

मार्क्सवादी दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा शक्ति संरचना को बनाए रखने का उपकरण है। भारतीय संदर्भ में उच्च जातियाँ शैक्षिक संरचनाओं पर अधिक नियंत्रण रखती हैं (बाउल्स एंड गिंटिस, 2021)।

### प्रतीकात्मक अंतःक्रियावाद

आधारभूत में निम्न जाति के छात्रों के साथ शिक्षकों और सहपाठियों का व्यवहार उनके आत्मविश्वास और प्रदर्शन को प्रभावित करता है (मीड, 2024)।

**भारतीय शिक्षा व्यवस्था में जातिगत असमानताओं के प्रमुख आयाम**

| क्रमांक | असमानता का आयाम | विवरण |
|---|---|---|
| 1 | प्रवेश में असमानता | निम्न जातियों के बच्चों का नामांकन अनुपात कम |
| 2 | विद्यालय छोड़ने की दर | SC/ST छात्रों में ड्रॉपआउट दर अधिक |
| 3 | संसाधनों की कमी | ग्रामीण दलित क्षेत्रों में विद्यालय सुविधाओं का अभाव |
| 4 | सामाजिक भेदभाव | विद्यालयों में अलग बैठाना, भोजन में भेदभाव |
| 5 | उच्च शिक्षा में कम प्रतिनिधित्व | प्रतिष्ठित संस्थानों में निम्न जातियों की कम भागीदारी |

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 2, February 2026
Impact Factor: 8.2

### जातिगत असमानताओं के कारण

#### आर्थिक कारक

निम्न जातियाँ प्रायः आर्थिक रूप से कमजोर होती हैं, जिससे शिक्षा पर खर्च सीमित रहता है।

#### सामाजिक बहिष्करण

सामाजिक बहिष्कार और भेदभाव विद्यार्थियों में हीनता की भावना उत्पन्न करते हैं।

#### सांस्कृतिक पूंजी का अभाव

उच्च जातियों की तुलना में निम्न जातियों के परिवारों में शैक्षिक वातावरण कम मिलता है (बूर्दियू, 1986)।

#### संस्थागत भेदभाव

विद्यालयी ढाँचे और पाठ्यक्रम में अप्रत्यक्ष रूप से उच्च जातीय मूल्यों का प्रभुत्व बना रहता है।

#### सरकारी नीतियाँ और प्रयास

भारत सरकार ने जातिगत असमानताओं को कम करने हेतु अनेक योजनाएँ लागू की हैं:

1. आरक्षण नीति
2. छात्रवृत्ति योजनाएँ
3. मध्याह्न भोजन योजना
4. समग्र शिक्षा अभियान
5. नवोदय विद्यालय एवं आवासीय विद्यालय

इन योजनाओं से पहुँच बढ़ी है, किंतु गुणवत्ता और सामाजिक स्वीकृति की चुनौतियाँ बनी हुई हैं (एनसीईआरटी, 2022)।

### निष्कर्ष

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में जातिगत असमानताएँ ऐतिहासिक, सामाजिक और आर्थिक कारणों से बनी हुई हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण यह स्पष्ट करता है कि शिक्षा समानता का साधन तभी बन सकती है, जब सामाजिक संरचना में परिवर्तन हो। आवश्यक है कि नीतियों के साथ सामाजिक चेतना, संवेदनशील शिक्षण और समावेशी वातावरण को बढ़ावा दिया जाए।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 2, February 2026
Impact Factor: 8.2

## संदर्भ सूची

1. आनंद, ए. (2024)। महिला अध्ययन की पाठशाला में नारीवादी शिक्षण-पद्धति और कोचिंग संबंध: भारतीय उच्च शिक्षा में जातिगत अभ्यास पर विचार। जाति: सामाजिक बहिष्कार पर एक वैश्विक जर्नल, 5(3), 410-428। https://doi.org/10.26812/caste.v5i3.811
2. कमल, यू., और रोलुआपुइया। (2025)। भारत में स्टार्टअप और घरेलू सामान: इंडस्ट्रीज़ स्टूडियो की भूमिका का आकलन। समसामयिक शिक्षा संवाद, 20(1), अनुच्छेद 103004. https://doi.org/10.1177/09731741241291689
3. कुमार, ए. (2025). सम्मिलित स्थान: भारतीय वाणिज्य में जातिगत भेदभाव का गहन विश्लेषण। समसामयिक शिक्षा संवाद, 22(2), 200-221. https://doi.org/10.1177/09731849241292863
4. एनसीईआरटी. (2022)। एजुकेशनल स्टैटिस्टिक्स एट ए ग्लांस। राष्ट्रीय स्टार्टअप अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद।
5. स्कारिया, एस. (2014)। जाति और वर्ग का क्या अर्थ है? केरल के एक गांव में शिक्षा पर ध्यान। समसामयिक शिक्षा संवाद, 11(2), 153-177. https://doi.org/10.1177/0973184914529012
6. टियरनी, डब्ल्यू.जी., सभरवाल, एन.एस., और मलिश, सी.एम. (2019)। संरचनात्मक संरचना: भारतीय उच्च शिक्षा में वर्ग और जाति। गुणात्मक पूछताछ, 25(5), 471-481। https://doi.org/10.1177/1077800418817836
7. झेंग, डब्ल्यू. (2026)। भारतीय शिक्षा प्रणाली में जातियाँ। एकेडमिक जर्नल ऑफ मैनेजमेंट एंड सोशल साइंसेज, 15(1), 41-50। https://doi.org/10.54097/e4ca3s36
8. कक्षा में जाति का (पुनः) उत्पाद: एक दलित सिद्धांत। (2025)। उच्च शिक्षा, 89, 825-847। https://doi.org/10.1007/s10734-024-01249-3
9. कमल, यू. (2023)। क्या मॉडल शिक्षा में 'जाति का मूल्य क्या है'? दलित की समकालीन आवाज़, 1, 1-12. https://doi.org/10.1177/2455328X231171509
10. कुमार, ए. आर., और मोचेरला, ए. के. (2021)। पेट्रोकेमिकल में जाति: दलित महिला छात्रों की जाति और भाषा संबंधी अनुभव। जाति: सामाजिक बहिष्कार पर एक वैश्विक जर्नल, 2(2), 1-20। https://doi.org/10.26812/caste.v4i2.682

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 2, February 2026 Impact Factor: 8.2

11. थोराट, एस., और खान, के. (2023)। स्टार्टअप में अंतर- मित्रवत संबंध अभी भी क्यों बनी है? शिक्षा के अंतःविषय इतिहास जर्नल, 71(1), अनुच्छेद e6211456656। https://doi.org/10.1177/00194662221146656
12. थोराट, एस., और न्यूमैन, के. एस. (2010)। बीडीडी बाय कास्ट. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
13. दुर्खीम, ई. (2012). शिक्षा एवं समाजशास्त्र. फ्री प्रेस.
14. देशपांडे, एस. (2009)। समावेशन बनाम उत्कृष्टता: भारतीय उच्च शिक्षा में कक्षाएं और सहायक उपकरण। समाजशास्त्र की दक्षिण अफ़्रीकी समीक्षा, 40(1), 127-147। https://doi.org/10.1080/21528586.2009.10425104
15. दासी, वी. (2012)। सामाजिक पहचान और स्टार्टअप योग्यता: जाति और धर्म की भूमिका। जर्नल ऑफ़ डेवलपमेंट स्टडीज़, 48(7), 887-903। https://doi.org/10.1080/00220388.2011.627670
16. डेज़ी, ए. आर. (1974). भारतीय राष्ट्रीयवाद के सोशल मीडिया. नवीनतम प्रकाशन.
17. बर्डियू, पी. (1986)। द फ़ोर्स ऑफ़ कैपिटल। ग्रीनवुड प्रेस.
18. बोनाल, एक्स., और ज़ानकाज़ो, ए. (2026)। शहर भारत में जाति-आधारित समानता को समानता। शहरी अध्ययन, 63(?), अनुच्छेद 51407970। https://doi.org/10.1177/00420980251407970
19. बोरूआ, वी.के., और अलैण्ड, एस. (2005)। विद्या, वेद और वर्ण: ग्रामीण भारत में शिक्षा पर धर्म और जाति का प्रभाव। जर्नल ऑफ़ डेवलपमेंट स्टडीज़, 41(8), 1369-1400। https://doi.org/10.1080/00220380500197161
20. बोल्स, एस., और गिंटिस, एच.एस. (2021)। पूंजीवादी अमेरिका में स्कूली शिक्षा। पुस्तकें.
21. भारत सरकार. (2021)। स्कूल शिक्षा पर वार्षिक रिपोर्ट। शिक्षा मंत्रालय.
22. भोई, डी., और पिछला, एन. आर. (2022)। हाशिए पर होना, स्टार्टअप अवसर और उच्च शिक्षा तक पहुंच: एससी/एसटी के अनुभव। दलित की समकालीन आवाज़, 14(2), 1-10। https://doi.org/10.1177/2455328X221129453
23. भोई, डी., और पिछला, एन. आर. (2024)। उच्च शिक्षा में अजागर्दी और धार्मिक स्थलों के लिए सांस्कृतिक मठ का निर्माण। जर्नल ऑफ सोशल इंक्लूजन स्टडीज, 10(1), अनुच्छेद 23944811241247278। https://doi.org/10.1177/23944811241247278

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 2, February 2026
Impact Factor: 8.2

24. मीड, जी. एच. (2024) माइंड, सेल्फ़ एंड सोसाइटी. शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस.
25. वेलास्कर, पी. (2010)। भारतीय शिक्षा में विशिष्टता और विशिष्टता: कुछ महत्वपूर्ण नीतिगत चिंताएँ। समसामयिक शिक्षा संवाद, 7(1), 58-93. https://doi.org/10.1177/0973184913411200
26. शिवानंदन, वी., और शिवनेकर, वी. (2023)। उच्च शिक्षा में प्रतिनिधित्व: एससी श्रेणी में विविधता, अनुकूल और अयोग्य। दलित की समसामयिक आवाज, आलेख 2455328X231198638. https://doi.org/10.1177/2455328X231198638
27. शुक, पी. के. (2024)। जाति में वर्ग: भारत में बच्चों में मानव निवेश में छूट। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशनल डेवलपमेंट, 106, 103004. https://doi.org/10.1016/j.ijedudev.2024.103004